द्रोणाचार्य

संतराम वत्स्य

द्रोणाचार्य

—संतराम वत्स्य

मिश्रा ब्रदर्स, अजमेर

☐ द्रोणाचार्य (उपन्यास)

लेखक : संतराम वत्स्य

☐ प्रकाशक :
विजय लक्ष्मी मिश्रा
मिश्रा ब्रदर्स, पुरानी मण्डी,
अजमेर—305001

☐ प्रथम संस्करण : 1977

☐ आवरण : प्रशान्त सेन

☐ चित्रकार : प्रकाश चन्द्र

☐ मुद्रक :
श्याम सुन्दर विजय
सुरेश प्रिन्टर्स,
सरदार पटेल मार्ग, अजमेर

☐ मूल्य : चार रुपये

द्रोणाचार्य

□

संतराम वत्स्य

द्रोणाचार्य

द्रोण गंगा-द्वार निवासी महर्षि भारद्वाज के पुत्र थे। भरद्वाज के आश्रम में बहुत से शिष्य शिक्षा पाते थे। इनमें अनेक ब्राह्मण-पुत्र और राजपुत्र थे। वहां वेद आदि की शिक्षा दी जाती थी। द्रोण अपने पिता के ही आश्रम में शिक्षा पाते थे। इसी आश्रम में पांचाल नरेश का पुत्र द्रुपद भी शिक्षा पा रहा था। ऋषि पुत्र द्रोण और राजपुत्र द्रुपद में गहरी मित्रता थी। राजपुत्र द्रुपद बातों ही बातों में कहा करता था "जब मैं राजसिंहासन पर बैठूंगा तो मित्र ! आधा राज्य तुम्हें दे दूंगा। मैं तुम्हारे लिए कुछ भी कर सकता हूँ।"

शिक्षा पूरी होने पर द्रुपद वापस अपने घर चला गया। महर्षि भारद्वाज भी स्वर्गवासी हुए। अब आश्रम में द्रोण ने आचार्य पद सम्भाला। युवा होने पर द्रोणाचार्य ने कृपाचार्य की बहन कृपी से विवाह कर लिया और अपने आश्रम में रहकर तप और अध्ययन करने लगे। कुछ समय बाद कृपी ने एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र पाकर द्रोण और कृपी दोनों प्रसन्न हुए। पुत्र का नाम रखा अश्वत्थामा। द्रोण अपने ही आश्रम में धनुर्विद्या का अभ्यास करते रहते थे। आचार्य द्रोण के आश्रम में कई शिष्य वेद आदि की शिक्षा पाते थे। उन सबका भरण-पोषण बड़ी कठिनाई से होता था। द्रोण चाहते थे कि उनके पुत्र, पत्नी और शिष्यों को अच्छा पौष्टिक भोजन मिले पर मिल नहीं पाता था।

द्रोण इतने निर्धन थे कि वह अपने इकलौते पुत्र अश्वत्थामा के लिए दूध तक नहीं जुटा पाते थे।

एक दिन की बात है, आश्रम के पास-पड़ोस में रहने वाले अश्वत्थामा के साथी बालक दूध पी रहे थे। अश्वत्थामा भी साथी बालकों को दूध पीते देख कर मचल उठा और रोने लगा। अपने प्राणों से भी प्यारे पुत्र के लिए दो घूँट दूध न जुटा पाने के लिए उन्हें अपने आप पर बड़ा क्रोध आया। उन्होंने निश्चय किया कि एक दुधारू गाय किसी से माँग कर लाऊँगा, जिससे अश्वत्थामा को पीने के लिए दूध मिल सके। पर आचार्य द्रोण किसी ऐसे ब्राह्मण से गाय नहीं माँगना चाहते थे, जिसके पास एक ही गाय हो। उन्होंने आस-पास के गाँवों के ब्राह्मणों के यहाँ चक्कर लगाया पर किसी के पास दूध देने वाली गाय नहीं मिली। निराश द्रोण जब घूम-फिर कर वापस आश्रम में आए तो क्या देखते हैं कि अश्वत्थामा के साथी बालक पानी में आटा घोलकर अश्वत्थामा को ललचा रहे थे। जब अश्वत्थामा के मांगने पर उन्होंने उसे वह आटे का घोल पीने को दिया तो वह उसे ही दूध समझकर बड़ी प्रसन्नता के साथ पीने लगा। "मैंने दूध पिया, मैंने दूध पिया" कहते हुए जब वह उछलने-कूदने लगा तो साथी बालक उसकी हँसी उड़ाने लगे।

यह सारी घटना आचार्य द्रोण ने अपनी आँखों से देखी तो मन ग्लानि से भर गया। कुछ और लोग भी यह तमाशा देख रहे थे। उनमें से किसी ने कहा, "इस धनहीन द्रोण को धिक्कार है जो बच्चे के लिए दो घूँट दूध भी नहीं जुटा पाता।"

यह भी आचार्य द्रोण ने अपने कानों से सुना। अब तो उनके कष्ट का पारावार न रहा। फिर भी आचार्य द्रोण ने मन में यही दृढ़ निश्चय किया कि चाहे मुझे कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े, मैं धन के लिए किसी की सेवा नहीं करूँगा।

इन्हीं दिनों भगवान परशुराम दुष्ट क्षत्रियों का संहार करने के पश्चात् अपना सर्वस्व ब्राह्मणों को दान करना चाहते थे। द्रोण यह भी जानते थे कि भगवान् परशुराम सम्पूर्ण धनुर्विद्या तथा दिव्य अस्त्रों का प्रयोग जानते हैं और नीति-शास्त्र के भी पंडित हैं। द्रोण उनके पास इस आशय से पहुंचे कि धन और धनुर्विद्या दोनों चीजें वहाँ मिलेगी।

भगवान् परशुराम उन दिनों महेन्द्र पर्वत पर वास करते थे। आचार्य द्रोण अपने तपस्वी शिष्य को साथ लेकर परशुराम के पास गए और अपना नाम

तथा गोत्र बताकर उन्हें प्रणाम किया। द्रोण ने कहा, "द्विजवर, मैं आपके पास धन आदि प्राप्ति की इच्छा से आया हूँ।"

यह सुनकर समस्त दुष्ट क्षत्रिय राजाओं का संहार करके धरती के भार को हलका करने वाले परशुराम बोले, "विप्रवर ! मैं आपका स्वागत करता हूँ। मेरे पास जो भी धन-सम्पत्ति थी, वह मैने ब्राह्मणों को दान कर दी। यह समुद्र, पर्वत, पृथ्वी भी, जो मैंने क्षत्रियों से छीनी थी, महर्षि कश्यप को दे दी है। अब तो मेरा यह शरीर ही बचा है। हाँ, यदि आप चाहो तो मैं आपको सम्पूर्ण धनुर्विद्या और दिव्य अस्त्रों के प्रयोग सिखा सकता हूँ। इनमें से आप जो चाहें माँग सकते हैं।

आचार्य द्रोण विनय पूर्वक बोले, "आप मुझे प्रयोग, रहस्य और संहार विधि सहित सम्पूर्ण अस्त्र शस्त्रों का ज्ञान प्रदान करें।"

तब 'तथास्तु' कहकर परशुराम जी ने सम्पूर्ण धनुर्विद्या तथा गुप्त अस्त्र विद्या द्रोण को सिखा दी।

इस अति गुप्त विद्या को सीखकर आचार्य द्रोण अस्त्र विद्या के प्रकाण्ड पंडित बन गए और प्रसन्न मन वहाँ से लौट आए। उन्हें सुवर्ण-रत्नादि धन तो नहीं मिला पर विद्या धन मिला जो उनके जीवन-काल में न तो नष्ट होने वाला था न समाप्त होने वाला।

□□

भगवान परशुराम से धनुर्विद्या और दिव्य अस्त्रों के प्रयोग को सीखकर आचार्य द्रोण महेन्द्रपर्वत पर से सीधे पांचाल नरेश राजा द्रुपद के पास गए। द्रुपद उनका बचपन का मित्र था। आचार्य द्रोण को पूरा विश्वास था कि द्रुपद मेरी धन से सहायता करेगा और मैं निर्धनता से छुटकारा पा जाऊँगा।

जब द्रुपद के पास जाकर आचार्य द्रोण ने सभा में कहा, "प्रिय द्रुपद ! मैं तुम्हारा छात्र जीवन का मित्र द्रोण हूँ और तुमसे मिलने आया हूँ। तुम कुशल तो हो न ?"

राजपद के मद में डूबे द्रुपद को मित्र द्रोण के प्रीतिपूर्वक कहे हुए सरल वचन बहुत बुरे लगे। निर्धन द्रोण का राजा द्रुपद को अपना मित्र बताना राजा को सहन नहीं हुआ। क्रोध के कारण राजा की भौहें तन गईं और आँखों में लाली छा गई। द्रुपद ने कहा, "हे ब्राह्मण ! लगता है तुम्हारी बुद्धि ठिकाने नहीं है जो मुझे अपना मित्र बता रहे हो। क्या मेरे जैसे बड़े राजा की तुम्हारे जैसे निर्धन से कभी मित्रता हो सकती है ? तुम जो बचपन की मित्रता की बात कर रहे हो वह बचकानी बात है। उस समय हम दोनों समान थे। मैत्री और विवाह अपने बराबर वालों से ही होता है। अब मैं राजा हूँ, तुम एक निर्धन ब्राह्मण। जिस तरह बचपन की बहुत सी बातें हमने छोड़ दी या भुला दी हैं वैसे ही उस मित्रता को भी भूल जाओ।

राजा द्रुपद की ऐसी कठोर बातें सुनकर आचार्य द्रोण अपमान और क्रोध के कारण जल उठे। उन्होंने क्षण भर में मन ही मन निश्चय कर लिया कि द्रुपद से इस अपमान का बदला अवश्य लूंगा। वे पाँचाल से सीधे कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर पहुँचे।

हस्तिनापुर में आचार्य द्रोण अपने साले कृपाचार्य के पास गुप्तरूप में रहने लगे।"

कृपाचार्य कौरवों को शस्त्रास्त्रों की शिक्षा देते थे। द्रोणाचार्य का पुत्र अश्वत्थामा जो आजकल अपने पिता के साथ मामा कृपाचार्य के पास ठहरा हुआ था, कृपाचार्य के बाद कौरवों को शस्त्रास्त्रों की शिक्षा देता था। उसने यह सम्पूर्ण विद्या अपने पिता द्रोणाचार्य से सीखी हुई थी। यहाँ अश्वत्थामा का परिचय भी

किसी को नहीं था। कौरव-पाण्डव इतना ही जानते थे कि यह कृपाचार्य जी का कोई सम्बन्धी है।

इस प्रकार द्रोणाचार्य ने कुछ समय तक अपने आपको छिपाए रखा। एक दिन जब बालक कौरव-पाण्डव गुल्ली डण्डा खेलने के लिए नगर से बाहर खुले मैदान में आए तो खेलते-खेलते उनकी गुल्ली पास के सूखे कुएं में गिर पड़ी। उन कुमारों ने गुल्ली को बाहर निकालने के बारे में बहुत सोचा, पर कोई भी उपाय उन्हें नहीं सूझा। सभी कुमार कुएँ के चारों ओर खड़े होकर कुएँ में देखने लगे।

इसी समय उन्होंने एक श्यामवर्ण के ब्राह्मण को थोड़ी दूर बैठे देखा। ब्राह्मण दुर्बल सा दिखाई देता था और उसके सिर के बाल सफेद हो चुके थे। सारे कुमार उस ब्राह्मण के पास गए और उसे घेरकर खड़े हो गए। कुमारों की कठिनाई को जानकर आचार्य द्रोण ने उन्हें फटकारते हुए कहा। "तुम कैसे क्षत्रिय बालक हो। धिक्कार है तुम्हें, इतने बड़े हो गए हो और अब तक इतनी भी योग्यता तुममें नहीं है कि कुएँ में पड़ी गिल्ली को निकाल सको। धनुर्विद्या का साधारण-ज्ञान रखने वाला भी इस काम को कर सकता है। अभी तुम्हारे सामने इस गुल्ली को ही नहीं अपनी इस अंगूठी को भी जिसे कुएँ में डाल रहा हूं बाहर निकाल कर दिखाता हूं। बोलो, बदले में तुम सब मेरी जीविका का प्रबन्ध करोगे?" यह कहकर द्रोणाचार्य ने अपनी अंगुली से अंगूठी निकाली और उस सूखे कुएँ में फेंक दी।

युधिष्ठिर ने आचार्य द्रोण से विनयपूर्वक कहा, "विप्रवर! कृपाचार्य की अनुमति लेकर आप यहां रहें। आपकी जीविका की व्यवस्था हो जाएगी।"

यह सुनकर हँसते हुए आचार्य द्रोण ने कहा, "यह देखो, मैं अभी तुम्हें अस्त्रविद्या का चमत्कार दिखाता हूँ। ये मुट्ठी भर सींकें हैं न, अब तुम इनका कमाल देखना। मैं एक सींक को तीर बनाकर गुल्ली को बींध दूँगा। फिर दूसरी

सींक से पहली सींक को बींधूँगा इसी तरह सींकों को बींधता जाऊँगा और जब सींक का सिर कुएँ के ऊपर तक आ जाएगा तो उसे पकड़कर खीच लूँगा। इस तरह गुल्ली बाहर निकल आएगी।"

आचार्य द्रोण ने जैसा कहा था वैसा कर दिखाया। इस अद्भुत कार्य को देखकर राजकुमारों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वे गुल्ली लेकर वहीं खड़े रहे और बोले, "अब आप अपनी अंगूठी को भी तो निकालिये।"

द्रोण ने कहा, "अभी लो।" और एक तीर से अंगूठी को बींधकर पहले की तरह निकाल लिया।

आचार्य द्रोण के लिये जो कार्य बहुत ही साधारण था, कुमारों के लिये वही कार्य आश्चर्यजनक था। अब तो सभी राजकुमारों ने आचार्य द्रोण को प्रणाम किया और बोले, "आप जैसा धनुर्विद्या जानने वाला दूसरा कोई नहीं है। कृपा करके बताइये कि आप कौन हैं और हम आपकी क्या सेवा करें।"

द्रोणाचार्य ने कहा, तुम सभी अपने दादा भीष्म के पास जाओ। उन्हें सारी घटना कह सुनाओ। तुम उन्हें मेरे बारे में बताना कि ऐसा-ऐसा एक ब्राह्मण है जो कहता है कि यह तो साधारण-सी बात है। मैं तो धनुर्विद्या के एक से एक बढ़कर प्रयोग जानता । वे सब समझ जायेंगे कि मैं कौन हूँ।"

राजकुमार खेलना भूलकर सीधे पितामह भीष्म के पास पहुँचे। उन्हें सारी बात सुनाकर उनके मुंह की तरफ देखने लगे।

भीष्मजी को यह समझते देर न लगी कि ऐसा कौशल आचार्य द्रोण के अतिरिक्त और कोई नहीं दिखा सकता।

पितामह भीष्म ने सोचा कि यदि आचार्य द्रोण से इन कुमारों को शस्त्रास्त्रों की शिक्षा दिलाई जाये तो अति उत्तम होगा। वे तुरन्त गये और आचार्य द्रोण को सत्कारपूर्वक ले आये। भीष्म पितामह के पूछने पर आचार्य

द्रोण ने बताया कि "मैं यहाँ पत्नी और पुत्र सहित कृपाचार्य के पास ठहरा हुआ हूँ। आप मुझे सत्कारपूर्वक अपने घर लाये हैं तो बताइये मैं आपका कौन-सा कार्य करूं ?"

भीष्म पितामह बोले, "आप राजकुमारों को शस्त्रास्त्रों की शिक्षा दीजिये और सम्मानपूर्वक रहिये। अपनी सारी आवश्यकताएँ और इच्छाएँ पूरी कीजिए। यह समझिए कि कौरवों का यह राज्य आपका ही है। आप यहाँ रहेंगे तो हम अपने को बड़ा सौभाग्यशाली समझेंगे। निश्चय ही यह आपकी कृपा होगी।

द्रोणाचार्य भीष्म के पास आकर रहने लगे। भीष्म ने धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रों को शिष्य रूप में उन्हें सौंप दिया। साथ ही आचार्य द्रोण को पत्नी और पुत्र सहित रहने के लिए सुसज्जित और आवश्यकता की वस्तुओं से भरा-पूरा भवन रहने के लिए दे दिया।

द्रोण ने भी कौरवों और पाण्डवों को शिष्य के रूप में स्वीकार किया और उन्हें धनुर्विद्या की शिक्षा देने लगे। हस्तिनापुर में अन्य राज्यों के राजकुमार भी द्रोण के पास धनुर्विद्या की शिक्षा लेने लगे। राजकुमार कर्ण भी आचार्य द्रोण से धनुर्विद्या सीखने लगा।

कर्ण और अर्जुन की बनती नहीं थी। कर्ण हर बात में अर्जुन को नीचा दिखाने का प्रयत्न करता और इस बात के लिए प्रायः दुर्योधन को अपने पक्ष में कर लेता।

अर्जुन क्षण भर का समय भी व्यर्थ नहीं गंवाता। वह सदा अभ्यास करता रहता। इसका ही यह परिणाम था कि वह सभी कुमारों में लक्ष्यवेध की दृष्टि से श्रेष्ठ था।

आचार्य चाहते थे कि उनका पुत्र अश्वत्थामा सबसे बढ़-चढ़कर निकले। जब शिष्य आचार्य के घर के लिए पानी भरने जाते तो तंग मुँह के बर्तनों के कारण उन्हें देर लगती और चौड़े मुँह का बर्तन होने के कारण अश्वत्थामा झट

पानी लेकर आ जाता। आचार्य दूसरे शिष्यों के पहुँचने से पहले ही अश्वत्थामा को अस्त्र चलाने की कोई उत्तम विधि बता देते थे। अर्जुन को इस बात का पता चल गया था कि आचार्य अपने पुत्र को दूसरों की अपेक्षा कुछ अधिक सिखा देना चाहते हैं। इसलिए अर्जुन भी अश्वत्थामा के साथ पानी लेकर लौट आता यही कारण था कि वह अश्वत्थामा से किसी बात में पीछे न रहा। गुरु-सेवा और गुरु-आज्ञापालन में भी अर्जुन बड़ी तत्परता दिखाता था। इसलिए भी आचार्य उसे अधिक चाहते थे।

आचार्य देखते कि अर्जुन हर घड़ी अभ्यास करता रहता है और वे जानते थे कि कोई भी कार्य ऐसा नहीं जो अभ्यास से न हो सके। उन्होंने एक दिन एकान्त में रसोइये को कहा कि वह अन्धेरे में कभी भी अर्जुन को भोजन न परोसे। साथ ही यह आज्ञा भी दी कि यह आज्ञा अर्जुन को कभी न बताए।

कुछ समय बाद रात को जब अर्जुन भोजन कर रहा था तो जोर की हवा चली और दीपक बुझ गया। अन्धेरा हो जाने पर भी अर्जुन ने भोजन करना बन्द नहीं किया। वर्षों के अभ्यास के कारण अन्धेरे में भी अर्जुन का ग्रास युक्त हाथ सीधा मुँह में ही जाता था। इससे अर्जुन ने यह परिणाम निकाला कि यदि पक्का अभ्यास किया जाए तो जो कार्य प्रकाश में हो सकता है, वह अन्धेरे में भी हो सकता है। उस दिन से अर्जुन ने रात में भी धनुर्विद्या का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया।

एक रात जब द्रोणाचार्य सोने चले तो उन्हें धनुष की टंकार सुनाई दी। वे बाहर गए तो देखा कि अर्जुन अन्धेरे में लक्ष्यवेध का अभ्यास कर रहा है। उन्होंने उसे छाती से लगा लिया और बोले, "अर्जुन! सच कहता हूं मैं तुम्हें धनुर्विद्या की ऐसी-ऐसी गुप्त बातें सिखाऊँगा कि संसार में कोई भी तुम्हारी बराबरी न कर सके।"

इसके बाद आचार्य ने अर्जुन को घोड़े पर चढ़कर, हाथी पर चढ़कर, रथ पर चढ़कर और भूमि पर रहकर युद्ध करने की शिक्षा दी।

आचार्य ने कुमारों को गदा, तलवार आदि के प्रयोग की कला और एक ही साथ अनेक शस्त्रों का प्रयोग तथा एक साथ अनेक शत्रुओं का सामना करने की विधियाँ भी सिखाईं।

द्रोणाचार्य की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैलती गई और अनेक राजकुमार युद्ध-विद्या सीखने के लिए उनके पास आने लगे।

एक दिन 'निषादराज' हिरण्यधनु का पुत्र एकलव्य आचार्य के श्री चरणों में उपस्थित हुआ। किन्तु आचार्य ने उसे यह कहकर शिष्य रूप में ग्रहण

नहीं किया कि वह निषाद बालक है। राजपूतों को उसके साथ रहना अखर सकता है।

एकलव्य द्रोणाचार्य के पास से सीधा वन में गया, जहाँ उसका निवास था। वहाँ पहुँच कर उसने आचार्य की मिट्टी की मूर्ति बनाई और उसे ही साक्षात् आचार्य मानकर, उसने धनुर्विद्या का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। वह नियमपूर्वक प्रतिदिन अभ्यास करने लगा।

यह निरन्तर किए गए अभ्यास का ही प्रभाव था कि एकलव्य बाण विद्या में अत्यन्त निपुण हो गया।

एक दिन सारे कौरव और पाण्डव आचार्य से अनुमति लेकर हिंसक पशुओं का शिकार करने के लिए जंगल में गए। उनके साथ कई नौकर-चाकर भी थे। एक नौकर के साथ-साथ उसका कुत्ता भी जंगल में इधर-उधर घूमता-फिरता उस जगह पहुँच गया, जहाँ एकलव्य अभ्यास कर रहा था। नगर का कुत्ता वनवासी एकलव्य के विचित्र पहनावे को देखकर भौंकने लगा। कुत्ते के लगातार जोर-जोर से भौंकने के कारण एकलव्य के अभ्यास में विघ्न पड़ने लगा। एकलव्य ने कुत्ते के खुले मुँह में इस फुर्ती से सात बाण मारे कि उसका मुँह बाणों से भर गया और भौंकना बन्द हो गया। वह कुत्ता उसी अवस्था में पाण्डव-कुमारों के पास चला गया। उस कुत्ते के मुँह को बाणों से भरा हुआ देखकर पाण्डव कुमार आश्चर्य में पड़ गए। धनुर्विद्या का ऐसा चमत्कार इससे पहले न तो उन्होने देखा था, न सुना था। वे बाण मारने वाले की प्रशंसा करने लगे और उनके मन में उससे परिचय प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न हुई।

पाण्डव-कुमार वन में आस-पास उस धनुर्धारी को खोजने लगे। थोड़ी ही दूर उन्हें बाण-विद्या का अभ्यास करता हुआ, एकलव्य दिखाई दिया।

पाण्डव उसके पास गए और पूछा कि तुम कौन हो, किसके पुत्र हो और तुमने धनुर्विद्या किससे सीखी है ?

एकलव्य ने उत्तर दिया, "मैं निषादराज हिरण्यधनु का पुत्र एकलव्य हूँ। द्रोणाचार्य मेरे गुरू हैं।"

पाण्डव कुमार वन से हस्तिनापुर लौट आए और कुत्ते वाली अद्भुत घटना आचार्य द्रोण को कह सुनाई। फिर अर्जुन ने एकान्त में आचार्य द्रोण से मिलकर कहा, "आचार्यवर! उस दिन आपने मुझे हृदय से लगाकर कहा था कि मेरा कोई भी शिष्य धनुर्विद्या में तुमसे बढ़कर नहीं होगा। फिर यह एकलव्य मुझसे भी बढ़कर कैसे हुआ?"

आचार्य द्रोण कुछ क्षण सोचते रहे और फिर अर्जुन को साथ लेकर वन में एकलव्य के पास पहुँचे।

एकलव्य बाण-विद्या का अभ्यास कर रहा था। आचार्य द्रोण को पास आते देखकर, उसने आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और दण्डवत् प्रणाम किया। वह हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ा हो गया।

द्रोणाचार्य को यह समझते देर न लगी कि एकलव्य में सुदृढ़ गुरुभक्ति है। साथ ही इसने अभ्यास भी बहुत किया है।

एकलव्य ने विनयपूर्वक कहा, "गुरुदेव! आपने यहां पधार कर मुझ पर बड़ी कृपा की है। आज्ञा दीजिए, मैं आपकी क्या सेवा करूँ?"

आचार्य द्रोण ने कहा, "यदि तुम मेरे शिष्य हो तो मुझे गुरू-दक्षिणा दो।"

एकलव्य बोला, "भगवन्! आप ही आज्ञा दीजिए कि मैं आपको गुरू-दक्षिणा में क्या दूँ? मेरे पास कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है, जिसे मैं आपको न दे सकूँ।"

यह सुनकर द्रोणाचार्य बोले, "तुम मुझे अपने दाहिने हाथ का अंगूठा दे दो।"

गुरू द्रोणाचार्य का यह कठोर वचन सुनकर सत्य पर अटल रहने वाले एकलव्य ने प्रसन्नता के साथ अपने दाहिने हाथ का अंगूठा काटकर द्रोणाचार्य को देते हुए अपनी प्रतिज्ञा निभाई।

द्रोणाचार्य एकलव्य की गुरू-भक्ति देखकर आश्चर्य-चकित रह गए। उन्होंने उसे समझाया कि अंगूठे के बिना केवल अंगुलियों द्वारा बाण कैसे खींचना चाहिए। परन्तु बिना अंगूठे के एकलव्य उतनी शीघ्रता से बाण नहीं चला पाता था।

इस घटना से अर्जुन बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी सारी चिन्ता दूर हो गई। एकलव्य का अंगूठा न रहने से द्रोणाचार्य की यह बात भी सत्य हो गई कि अर्जुन की बराबरी करने वाला मेरा दूसरा कोई शिष्य नहीं होगा।

□□

जब सभी कुमार धनुर्विद्या और अस्त्र-संचालन की कला में निपुण हो गए तो एक दिन आचार्य द्रोण ने उनकी परीक्षा लेने का निश्चय किया।

आचार्य द्रोण ने कारीगर से एक नकली गीध बनवाकर वृक्ष पर रखवा दिया। कुमारों को इसका पता नहीं लगने दिया। फिर आचार्य ने इसी गीध पर निशाना लगाने की परीक्षा लेने का निश्चय किया।

सब कुमारों को आचार्य ने धनुष-बाण लेकर तैयार होने को कहा। "मैं बारी-बारी से तुम सबसे इसी गीध की गर्दन उड़ाने के लिए निशाना लगवाऊँगा।" उन्होंने सबसे पहले युधिष्ठिर को कहा कि—तुम धनुष पर बाण चढ़ाकर निशाना साधो और जब मैं कहूं तब बाण मारना। जब युधिष्ठिर ने निशाना साध लिया तो आचार्य द्रोण ने कड़कती आवाज में पूछा, "युधिष्ठिर ! तुम्हें गीध दिखाई दे रहा है न ?"

युधिष्ठिर ने कहा, "आचार्य, दिखाई दे रहा है।"

आचार्य ने दोबारा पूछा, "क्या तुम्हें मैं, वृक्ष और अपने ये भाई भी दिखाई दे रहे हैं?"

"हां गुरूदेव" युधिष्ठिर ने कहा।

यह उत्तर सुनकर आचार्य द्रोण कुछ अप्रसन्न होकर बोले, "हट जाओ यहाँ से। तुम इस गीध को नहीं बींध सकते।"

इसके बाद आचार्य द्रोण ने दुर्योधन, भीम तथा अन्य राजकुमारों से वैसा ही प्रश्न किया। प्रश्न के उत्तर में सभी ने कहा कि हमें सब कुछ दिखाई दे रहा है। यह उत्तर सुनकर आचार्य ने सबको बारी-बारी से झिड़ककर हटा दिया। अन्त में द्रोणाचार्य ने अर्जुन को निशाना साधने को कहा। द्रोणाचार्य ने फिर वही प्रश्न पूछा, "अर्जुन! क्या तुम उस वृक्ष पर बैठे गीध को, वृक्ष को और मुझे देख रहे हो?"

अर्जुन बोला, "आचार्यवर! मुझे केवल गीध दिखाई दे रहा है और कुछ भी नहीं।"

कुछ क्षण रुककर आचार्य ने फिर पूछा, "अर्जुन! यदि तुम गीध को अच्छी तरह देख रहे हो तो बताओ कि उसके अंग कैसे हैं।"

तब अर्जुन ने उत्तर दिया, "मैं केवल गीध के सिर को देख रहा हूं और किसी अंग को नहीं।"

अर्जुन का उत्तर सुनकर आचार्य बोले, "चलाओ बाण।"

अर्जुन ने बाण छोड़ दिया और गीध का सिर कट गया।

अब तो आचार्य द्रोण को पूरा-पूरा विश्वास हो गया कि अर्जुन मेरे शिष्यों में सबसे योग्य है और यह मेरी आशानुसार एक दिन राजा द्रुपद को अवश्य पराजित करेगा। ▭▭

एक बार आचार्य द्रोण अपने शिष्यों के साथ गंगा में स्नान करने गये। वहाँ जल में डुबकी लगाते ही एक मगरमच्छ ने उन्हें टाँग से पकड़ लिया। आचार्य द्रोण ने घबराकर शिष्यों को पुकारा। उनकी 'बचाओ–बचाओ' की पुकार सुनकर सबसे पहले अर्जुन दौड़ा आया और उसने पाँच बाण मारकर मगरमच्छ को मार डाला। दूसरे राजकुमार हक्के-बक्के से जहाँ के तहां खड़े रहे।

अर्जुन पर प्रसन्न होकर आचार्य द्रोण ने उसे ब्रह्मशिर नामक अस्त्र का प्रयोग सिखाया और कहा कि किसी मनुष्य पर इस अस्त्र का प्रयोग न करना। देवता या राक्षस अर्थात् जो मनुष्य न हो, उसी पर इस शस्त्र का प्रयोग करना।

□□

जब आचार्य द्रोण ने देखा कि धृतराष्ट्र के पुत्र कौरव और पाण्डव अस्त्र-विद्या की शिक्षा समाप्त कर चुके हैं तो उन्होंने कृपाचार्य, भीष्म पितामह, महर्षिव्यास और महात्मा विदुर के सामने राजा धृतराष्ट्र से कहा, "राजन्! आपके कुमार अस्त्र-विद्या की शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। यदि आप आज्ञा दें तो वे अपनी सीखी हुई अस्त्र-विद्या की कला का प्रदर्शन सबके सामने करें।"

धृतराष्ट्र बोले, "आचार्य द्रोण! सभी कुमारों को शस्त्रास्त्र विद्या सिखाकर आपने बहुत बड़ा कार्य किया है। अस्त्र-विद्या की कला का प्रदर्शन करने के लिए आप उपयुक्त स्थान और समय निश्चित करके मुझे बताएँ कि क्या–क्या प्रबन्ध करना है।"

फिर धृतराष्ट्र ने महात्मा विदुर को कहा कि आचार्य के कहे अनुसार सारी व्यवस्था कर दीजिये।

एक बड़े मैदान को आचार्य द्रोण ने पसन्द किया। वहाँ राजघराने के लोगों को बैठने के लिये अलग और जनपद के लोगों को बैठने के लिये अलग विशाल मंच बनाए गए। प्रदर्शन के लिये अलग स्थान निश्चित हुआ।

निश्चित दिन और समय पर राजा धृतराष्ट्र, भीष्म पितामह, आचार्य द्रोण को आगे करके वहाँ पधारे। मन्त्री, राजकर्मचारी और प्रजा के लोग भी प्रदर्शन देखने आए। राजभवन की स्त्रियाँ भी सज-धज कर वहाँ प्रदर्शन देखने आईं।

प्रदर्शन प्रारम्भ करने का समय हुआ तो आचार्य द्रोण श्वेत वस्त्र और श्वेत यज्ञोपवीत धारण किए अपने पुत्र अश्वत्थामा के साथ रंगमंच पर आए। आचार्य के सिर और दाढ़ी के बाल सफेद हो गए थे। उन्होंने श्वेत पुष्पों की माला पहनी हुई थी और श्वेत चन्दन लगाया हुआ था। ब्राह्मणों के मंगलपाठ से कार्य प्रारम्भ हुआ।

इसके बाद बहुत-से राजकर्मचारी तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्र लाकर वहाँ रख गए। फिर वीर राजकुमार रथों में बैठकर वहाँ आए। वे वीरोचित वेश-भूषा से सुसज्जित थे। वे कमर कसे, कवच धारण किए हुए हाथों में चमड़े के दस्ताने पहने, पीठ पर तुणीर बाँधे और धनुष कन्धे पर लटकाए हुए थे। सभी ने आचार्य द्रोण को सैनिक ढंग से प्रणाम किया। इसके बाद कुमारों ने शस्त्रास्त्रों की पूजा की। अब शस्त्र-संचालन कला का प्रदर्शन प्रारम्भ हुआ। राजकुमारों का कौशल देखकर सभी दर्शक चकित हुए। दर्शक बार-बार 'वाह-वाह' करने लगे। कुमारों ने तरह-तरह के पैंतरे बदलकर तलवार भांजने और धनुष चलाने के करतब दिखाए। फिर रथ चलाने का प्रदर्शन हुआ। बाद में घोड़े और हाथी पर बैठकर युद्ध करने का प्रदर्शन हुआ। कुश्ती लड़ने के भी कितने ही दाव-पेंच कुमारों ने दिखाए।

अब दुर्योधन और भीमसेन हाथ में गदा लिए रंगभूमि में उतरे। वे दोनों कमर कसकर, युद्ध के लिये तैयार दो गजराजों की तरह आमने-सामने खड़े हो गये। फिर अपनी-अपनी गदाओं को घूमाते हुए पैंतरे बदल-बदल कर मण्डल में घूमने लगे।

महात्मा विदुर जन्मांध धृतराष्ट्र को इस प्रदर्शन का विवरण सुना रहे थे और पाण्डव माता कुन्ती, कौरव माता गान्धारी को सारा हाल बता रही थीं। दुर्योधन और भीमसेन के गदा–युद्ध के प्रदर्शन के समय दर्शक-मण्डली दो दलों में बंट गई। कुछ भीमसेन का उत्साह बढ़ाने लगे तो कुछ दुर्योधन का। दर्शकों में खूब हलचल मच गई और शोर होने लगा। स्थिति को बिगड़ता देखकर आचार्य द्रोण ने अपने पुत्र अश्वत्थामा को कहा कि वह दुर्योधन और भीम को गदा-युद्ध से रोके ताकि मामला तूल न पकड़ जाए। अश्वत्थामा ने उन दोनों को रोकते हुए कहा कि गुरू द्रोणाचार्य की आज्ञा है, कि गदा-युद्ध तुरन्त बन्द कर दिया जाये।

इसके बाद द्रोणाचार्य ने बाजे बजाना बन्द करवाकर दर्शकों से कहा, "दर्शकगण! अब आप मेरे सबसे योग्य शिष्य अर्जुन का युद्ध-कौशल देखिये।"

इतने में वीरवर अर्जुन हाथों में गोह के चमड़े के दास्ताने पहने और बाणों से भरा तरकस लिये धनुष की टंकार करता आ रंगभूमि में प्रविष्ट हुआ। अब फिर शंख और दूसरे बाजे बजने लगे। दर्शकों में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। अपने पुत्र की प्रशंसा सुनकर माता कुन्ती के नेत्रों में हर्ष के आँसू आ गये।

जब शोर कुछ कम हुआ तो अर्जुन ने अस्त्र-विद्या का प्रदर्शन प्रारम्भ किया। पहले उसने आग्नेय अस्त्र से आग पैदा करके दिखाई, फिर वरुण अस्त्र द्वारा पानी बरसा कर आग को बुझा दिया। फिर वायव्य अस्त्र से आँधी पैदा कर दी और पर्जन्य अस्त्र से बादल पैदा कर दिये। इसके बाद भौमास्त्र से भूमि और पर्वतास्त्र से पर्वत पैदा कर दिये। इसके बाद अर्जुन ने अन्तर्धान अस्त्र चला कर अपने को अदृश्य कर दिया। वह क्षण भर में दर्शकों को बहुत छोटा दिखाई देने लगता और दूसरे ही क्षण लम्बा। अभी-अभी वह रथ के धूरे पर खड़ा होता और दूसरे ही क्षण रथ के बीच दिखाई देता।

जब अर्जुन अपना प्रदर्शन समाप्त कर चुका और बाजे बजना बन्द हो गये तो उसी समय दरवाजे की ओर से ताल ठोंकने की जोर की आवाज सुनाई दी। सब दर्शकगण उत्सुकता से उस ओर देखने लगे जिस ओर से मेघ गर्जन जैसी यह आवाज आई थी।

लोगों ने देखा कि कर्ण द्वार से रंगमंच की ओर चला आ रहा है। उसके शरीर पर शरीर के साथ ही उत्पन्न दिव्य कवच थे। दोनों कानों में दिव्य कुण्डल पहने हुए, हाथों में धनुष और कमर में तलवार बाँधे हुए वीर कर्ण ने वीर गति से मंच पर प्रवेश किया। वीर कर्ण में सिंह जैसा बल, साँड के समान जूझने की शक्ति और गजराज के समान पराक्रम था। उसने द्रोणाचार्य और कृपाचार्य को उपेक्षापूर्वक प्रणाम किया। सभी दर्शक एकटक उसकी ओर देख रहे थे और जानना चाहते थे कि वह वीर कौन है। इतने में ही कर्ण ने अर्जुन को सम्बोधित करते हुए कहा, "अर्जुन ! तुमने युद्ध-कौशल के अभी जो करतब दिखाए हैं, उन पर फूलो मत। मैं तुमसे बढ़कर करतब दिखा सकता हूँ।"

कर्ण की बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि कर्ण का पक्ष लेने के लिये कई लोग एकदम उठ खड़े हुए। यह देख दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ। दूसरी ओर अर्जुन कर्ण के चुनौती देने से क्रोध और लज्जा से भर गया।

द्रोणाचार्य की आज्ञा लेकर कर्ण ने वे सभी करतब कर दिखाए जो अर्जुन ने दिखाए थे। दुर्योधन और उसके भाईयों ने कर्ण को छाती से लगाया और उसका खूब अभिनन्दन किया। फिर दुर्योधन कर्ण से बोला, "कर्ण ! तुम यहाँ आये, यह हमारे लिये बड़े सौभाग्य की बात है। मैं और मेरा सारा राज्य आज से तुम्हारे हुए। तुम मन चाहे ढंग से इस राज्य के सुख का उपभोग करो।"

कर्ण बोला, "राजन् ! मैं आपकी मित्रता चाहता हूँ। मेरी यह प्रबल इच्छा है कि मैं अर्जुन से दो-दो हाथ करूँ। आपने अभी जो कुछ कहा, उस पर मुझे पूरा भरोसा है।"

दुर्योधन बोला, "मित्र कर्ण ! मैं चाहता हूं कि तुम मेरे साथ रहो और अपने शत्रुओं का सिर कुचलने में सफल होओ ।"

अर्जुन ने कौरवों से घिरे कर्ण से कहा, "कर्ण ! बिना बुलाए आने वाले और बिना बुलाए बोलने वाले की जो गति होती है, मेरे द्वारा मारे जाने पर तुम्हारी भी वही गति हो ।"

कर्ण ने उत्तर दिया, "यह रंगमंच तुम्हारा ही नहीं है । यह बल-पराक्रम दिखाने का स्थान है और जिस भी वीर के पास बल-पराक्रम हो, वह उसका प्रदर्शन यहाँ कर सकता है । साहस हो तो बाणों से बातचीत करो । मैं आज तुम्हारे गुरू के सामने ही तुम्हारा सिर धड़ से अलग किये देता हूँ ।"

यह सुनते ही अर्जुन ने आचार्य द्रोण से कर्ण के साथ युद्ध करने की आज्ञा ली और कर्ण की ओर बढ़ गया ।

दुर्योधन और उसके भाई कर्ण के पास खड़े हुए उसे उत्साहित करने लगे और द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और भीष्म पितामह अर्जुन के पास खड़े हुए । अर्जुन और कर्ण में युद्ध होने वाला है यह सोचकर कुन्ती देवी को भय से मूर्छा आ गई । बात यह थी कि कर्ण भी कुन्ती का ही पुत्र था ।

कर्ण और अर्जुन को लड़ने-मरने के लिये तैयार देखकर कृपाचार्य बोले, "कर्ण ! कुन्ती का सबसे छोटा पुत्र पाण्डुनन्दन अर्जुन तुम से युद्ध करेगा । तुम भी अपने माता–पिता तथा कुल का परिचय दो और अपने राजवंश का नाम भी बताओ । बात यह है कि युद्ध समान कुल-शील वालों के साथ ही होना चाहिये ।"

कृपाचार्य के यों कहने पर कर्ण का मुख लज्जा से नीचे झुक गया ।

दुर्योधन ने कृपाचार्य का समाधान करते हुए कहा, "आचार्य ! राजपद तीन प्रकार का होता है । परम्परागत, शूरवीर तथा सेनापति । शूरवीर होने के

कारण कर्ण किसी राजा से कम नहीं है। किन्तु फिर भी यदि अर्जुन कर्ण के राजा न होने के कारण उनसे लड़ना न चाहे तो मैं अभी कर्ण को अंगदेश के राजपद पर आसीन करता हूँ।" यह कहकर राजा दुर्योधन ने धृतराष्ट्र और भीष्म पिता से आज्ञा लेकर ब्राह्मणों द्वारा अभिषेक का सामान मँगवाया। तत्पश्चात् महाबली कर्ण को सोने के सिंहासन पर बिठाकर ब्राह्मणों ने कर्ण को अंगदेश के राजा के पद पर अभिषेक कर दिया।

अभिषेक हो जाने पर कर्ण ने दुर्योधन से कहा, "राजन् ! आपने मुझे अंगदेश का राज्य देकर धन और मान दिया। अब मुझे बताइए कि इसके बदले में मैं आपको क्या भेंट दूँ ?"

दुर्योधन ने कहा, "मित्र कर्ण ! मैं तुम्हारे साथ ऐसी मित्रता चाहता हूं जिसका कभी अन्त न हो।"

उसके यों कहने पर दोनों एक-दूसरे के गले मिले और वचन को निभाने का विश्वास दिलाया।

इसी समय लाठी टेकता हुआ अधिरथ कर्ण को पुकारता हुआ युद्ध-भूमि में आया। अधिरथ को देखते ही कर्ण सिंहासन से उतर कर दौड़ा और अधिरथ के चरणों में गिर पड़ा। अधिरथ और उसकी पत्नी ने ही अनाथ कर्ण को पुत्रवत् पाला था।

कर्ण को अधिरथ के पाँवों पर झुकते देखकर भीमसेन ने कर्ण को कहा, "ऐ सूत पुत्र ! तुम्हें तो अर्जुन के तीरों से बिंधकर मरने का अधिकार भी नहीं है। तुम तो चाबुक हाथ में पकड़ो और अपने पूर्वजों का रथ हाँकने का काम संभालो।"

भीम के कठोर वचनों को सुनकर कर्ण के होठ क्रोध से काँपने लगे। इसी समय दुर्योधन अपने भाईयों के बीच में से निकलकर भीम के पास आया और बोला, "भीमसेन ! तुम्हें ऐसी बात नहीं करनी चाहिये। क्षत्रियों में बल का

ही महत्व माना जाता है। फिर कर्ण मेरा मित्र और अब अंगदेश का राजा है और यदि तुम नहीं मानते हो तो लड़कर फैसला कर लो कि कौन शक्तिशाली है। लोग दुर्योधन की प्रशंसा करने लगे। ऐसा लगने लगा कि अभी दोनों में युद्ध छिड़ जायेगा।

तभी सूर्य अस्त हो गया। मशालची मशालें जगाकर ले आए और कर्ण का हाथ पकड़ कर दुर्योधन उसे रंगमण्डप से बाहर ले आया। पाण्डव भी अपने निवास को चल दिए। घर जाते दर्शकों में कोई तो अर्जुन की प्रशंसा कर रहा था और कोई कर्ण की। कितने ही दुर्योधन की प्रशंसा कर रहे थे।

कुन्ती अपने पुत्र को पहचान कर प्रसन्न हुई। कर्ण के साथ मित्रता हो जाने से दुर्योधन भी बहुत प्रसन्न था। उसे लगा कि अब अर्जुन और भीम से डरने की जरूरत नहीं रही।

कर्ण के युद्ध-कौशल को देखकर धर्मात्मा युधिष्ठिर भी सोचने लगे कि पृथ्वी पर कर्ण की बराबरी करने वाला दूसरा कोई नहीं है।

▭▭

पाण्डवों तथा कौरवों की शस्त्रास्त्र विद्या की शिक्षा पूरी हो चुकी। अब आचार्य को गुरू-दक्षिणा देने का समय आया। आचार्य द्रोण ने मन ही मन शिष्यों से ली जाने वाली गुरू-दक्षिणा का मन ही मन निश्चय कर लिया था।

एक दिन सभी शिष्यों को बुलाकर आचार्य ने कहा कि "पांचाल देश के राजा द्रुपद को कैद करके मेरे सामने ले आओ। यही मेरे लिये सर्वोत्तम गुरू-दक्षिणा होगी।"

"सबसे पहले मैं द्रुपद को कैद करूँगा" यह सोचकर सबसे पहले दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन आदि ने पांचाल पहुंचकर द्रुपद की राजधानी को उजाड़ना शुरू कर दिया।

द्रुपद को जब अचानक हुए इस आक्रमण का पता लगा तो वह अपने भाईयों और विशाल सेना को लेकर सामना करने के लिये आया।

अर्जुन जान-बूझकर पीछे रह गया था। वह जानता था कि ये कौरव द्रुपद को जीत नहीं सकते। अतः पाँचों पाण्डव नगर से बाहर रुके रहे।

जब पाण्डवों को गुप्तचरों से सूचना मिली कि द्रुपद ने कौरवों को युद्ध में परास्त कर दिया है और घायल कौरव कुमार भाग रहे हैं तो पाण्डव आचार्य द्रोण को प्रणाम करके अपने-अपने रथों पर जा बैठे और युद्ध के लिये चल दिये। अर्जुन ने युधिष्ठिर को वहीं रुकने को कहा।

पाण्डव सेना के आगे गदाधारी भीम चल रहे थे। वे द्रुपद की सेना में गदा घुमाते घुस गए और सैनिकों पर टूट पड़े। भीमसेन के गदा-प्रहारों से द्रुपद के सैनिक तिनकों की तरह गिरने लगे।

उधर अर्जुन सीधे राजा द्रुपद पर बाणों की वर्षा करने लगा। द्रुपद के सैनिकों ने भी अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया। वे प्राणों का मोह छोड़कर अर्जुन का सामना करने लगे।

राजा द्रुपद ने अपने भाई सत्यजित की सहायता से इसी समय अर्जुन पर धावा बोल दिया पर अर्जुन जरा भी विचलित नहीं हुआ और द्रुपद को कैद करने के लिये आगे बढ़ा। द्रुपद के भाई सत्यजित ने अर्जुन को रोकने का प्रयत्न किया।

तभी अर्जुन ने एक तीर से सत्यजित के धनुष की डोरी काट डाली और राजा द्रुपद पर चढ़ दौड़ा। पर सत्यजित ने दूसरा धनुष लेकर तुरन्त अर्जुन, उसके सारथी और घोड़ों को घायल कर दिया। अर्जुन ने भी सत्यजित पर सीधा आक्रमण किया और फिर धनुष काट डाला और उसके घोड़े मार डाले। सत्यजित युद्ध-भूमि से भाग खड़ा हुआ।

अब अर्जुन और द्रुपद में युद्ध होने लगा। अर्जुन ने द्रुपद का धनुष और उसकी ध्वजा को काट गिराया। सारथी और घोड़े भी घायल हो गये।

जब द्रुपद दूसरा धनुष लेने लगा तभी अर्जुन तलवार निकालकर सिंह गर्जना करते हुए द्रुपद पर झपट पड़ा। द्रुपद के रथ के डंडे पर चढ़कर उसने द्रुपद को बलपूर्वक पकड़ लिया।

राजा द्रुपद को अर्जुन द्वारा पकड़े जाने के समाचार से सारी पांचाल सेना में भगदड़ मच गई।

अन्य राजकुमारों द्वारा लोगों को लूटने को अनुचित समझकर अर्जुन ने भीमसेन से कहा, "भैया, राजा द्रुपद को हमने केवल गुरू-दक्षिणा के लिये कैद किया है। उनसे हमारा कोई वैर-विरोध नहीं है। इसलिये इनकी सेना का संहार और नगर का नाश नहीं होना चाहिये। हमारा उद्देश्य राजा द्रुपद को कैद कर आचार्य द्रोण के सामने उपस्थित करना भर है। इसलिये इस मार-काट को रोक दीजिये।"

सैनिकों का संहार और नगर की लूट तुरन्त रोक दी गई। राजा द्रुपद को कैद करके पाण्डवों ने द्रोणाचार्य के सामने प्रस्तुत कर दिया।

राजा द्रुपद का अभिमान चूर-चूर हो गया था। वे बन्दी के रूप में आचार्य द्रोण के सामने खड़े थे।

द्रोणाचार्य ने बन्दी राजा द्रुपद से कहा, "राजन्! मेरे शिष्यों ने मेरी आज्ञा से तुम्हारे राज्य को रौंद डाला है। तुम मेरे कैदी हो। पर क्या तुम चाहते हो कि दुबारा हमारी मित्रता हो जाए?" यह कहकर द्रोणाचार्य कुछ हँसे और फिर बोले, "द्रुपद यह सोचकर घबराओ मत कि तुम्हारे प्राण अब मेरे हाथ में हैं। मैं क्षमाशील ब्राह्मण हूं। तुम मेरे बचपन के साथी हो। मैं दोबारा तुम्हें मित्र बनाना चाहता हूं। तुम्हारे जीते हुए राज्य का आधा भाग मैं तुम्हें लौटाता हूँ। स्मरण करो, तुमने कहा था कि जो राजा नहीं है, वह राजा का मित्र नहीं

हो सकता। इसलिए मैंने तुम्हारा राज्य लेने का प्रयत्न किया है। गंगा के दक्षिण का जो प्रदेश है, उसके तुम राजा हो और गंगा के उत्तर का जो प्रदेश है, उसका राजा मैं हूं। चूँकि अब मैं भी राजा बन गया हूँ, इसलिये तुम्हारी मित्रता के योग्य हूँ।"

लज्जा के मारे सिर झुकाए द्रुपद ने कहा, "आचार्य! आप पराक्रमी, महात्मा और अत्यन्त उदार हैं। आपने मेरे साथ उदारता का व्यवहार किया है, मैं आभारी हूँ। मैं भी आपकी मित्रता और प्रेम चाहता हूँ।

द्रुपद के यों कहने पर द्रोणाचार्य ने उन्हें आधा राज्य देकर आदर के साथ विदा किया।

▭▭

द्रुपद आधे राज्य का शासन करने लगा किन्तु उसके मन में द्रोणाचार्य से बदला लेने का विचार दृढ़ था।

राजा द्रुपद के कोई सन्तान नहीं थी। उन्हें एक तो यह दुःख था, दूसरे वे द्रोणाचार्य से बदला लेने का कोई उपाय खोज रहे थे। काश्यप गोत्र के दो ब्रह्मर्षियों याज और उपयाज से उनकी भेंट हुई। वे दोनों ब्रह्मा के तुल्य प्रभावशाली और सूर्यदेव के उपासक थे।

एक दिन राजा द्रुपद ने ब्रह्मर्षि उपयाज से विनय पूर्वक निवेदन किया कि "मेरे ऐसा शक्तिशाली पुत्र उत्पन्न हो जो आचार्य द्रोण को मार सके, वह उपाय मुझे बताइए। आप सर्वज्ञ और सब कुछ करने में समर्थ हैं। मेरा मनोरथ पूरा हो सके, ऐसा उपाय करने पर मैं आपको दस करोड़ गौएं और जो भी वस्तु आप चाहेंगे सादर भेंट करूंगा।"

ब्रह्मर्षि उपयाज ने स्पष्ट शब्दों में ऐसा उपाय करने से मना कर दिया। फिर भी राजा द्रुपद ने उपयाज की सेवा-सुश्रूषा में कमी नहीं की अपितु पहले से भी अधिक सेवा करने लगा।

एक वर्ष और बीत जाने पर एक दिन उपयाज ने राजा द्रुपद से कहा, "राजन्! तुम मेरे बड़े भाई के पास जाओ। वे तुम से ऐसा यज्ञ करवा देंगे, जिससे तुम्हारी मनोकामना पूरी हो सके।"

राजा द्रुपद याज मुनि के आश्रम में गए और उन्हें विनय पूर्वक अपने मन की बात बताई साथ ही यह भी कहा कि इस उपाय के बदले मैं आपको अस्सी हजार गौएं दान दूंगा।

याज मुनि ने यज्ञ करवाने की स्वीकृति दे दी। उन्होंने इस यज्ञ के लिए उपयाज को भी निमंत्रित किया। उपयाज ने राजा द्रुपद को यज्ञ कर्म का उपदेश दिया और कहा, "राजन्, तुम जैसा पुत्र चाहते हो, वैसा ही पुत्र तुम्हारे घर उत्पन्न होगा।"

विधि विधान के साथ यज्ञ समाप्त हुआ। राजा द्रुपद को देवता के समान तेजस्वी राजकुमार और अत्यन्त सुन्दर राजकुमारी प्राप्त हुई।

राजकुमार को पाकर पांचाल की जनता को बड़ा हर्ष हुआ। जनता ने चिल्लाकर कुमार का अभिनन्दन किया। उसी समय आकाशवाणी हुई कि "यह राजकुमार पांचालों के भय को दूर करके उनके यश को बढ़ाएगा तथा राजा द्रुपद का मनचाहा कार्य करेगा। इसी के हाथों द्रोणाचार्य का वध होगा।"

राजकुमारी के लिए भी आकाशवाणी हुई कि "इस कुमारी का नाम कृष्णा है। यह क्षत्रियों का संहार करने के लिए पैदा हुई है। इस के कारण कौरवों पर विपत्ति का पहाड़ टूटेगा।"

यह आकाशवाणी सुनकर पांचाल सिंह गर्जना करने लगे।

□□

आचार्य द्रोण को इन सारी बातों का पता लग गया। फिर भी यह सोचकर कि भविष्य को कोई नहीं टाल सकता, वे द्रुपद कुमार धृष्टद्युम्न को अस्त्र-शस्त्र विद्या की शिक्षा देने हेतु अपने पास ले आये।

उधर पाण्डव वारणावत के लाक्षागृह से निकलकर घूमते-फिरते पांचाल देश में जा पहुँचे और उन्होंने द्रौपदी को स्वयंवर में जीत लिया।

दुर्योधन पहले तो यह सोचकर प्रसन्न था कि पाण्डव लाक्षागृह में जल मरे हैं। पर जब उसे पता लगा कि स्वयंवर में द्रौपदी को जीतने वाला अर्जुन ही था और पाण्डव माता कुन्ती सहित सब जीवित हैं तो उसकी चिन्ता का ठिकाना न रहा। दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से पाण्डवों को वश में रखने के उपायों पर विचार किया। वह उनमें फूट डलवाकर तथा द्रुपद को उनके विरुद्ध भड़काकर निर्बल कर देना चाहता था। पर कर्ण का विचार था कि पाण्डवों को पराक्रम से दबाना चाहिए। भीष्म पितामह चाहते थे कि आधा राज्य पाण्डवों को दे दिया जाए और कौरव-पाण्डव सुख-शान्ति पूर्वक रहें। आचार्य द्रोण का कहना था कि पाण्डवों के पास बहुत से उपहार लेकर कोई दूत जाए और उन्हें सम्मान सहित यहाँ बुला लाए, फिर उन्हें आधा राज्य दे दिया जाए और कौरव पाण्डव प्रेम से रहें।

कर्ण ने द्रोणाचार्य का विरोध किया। इस पर द्रोणाचार्य ने कर्ण को खूब फटकारा महात्मा विदुर ने भी भीष्म और द्रोण का समर्थन किया। अन्त में धृतराष्ट्र ने महात्मा विदुर को भेजकर पाण्डवों को हस्तिनापुर बुला भेजा। पाण्डवों के हस्तिनापुर आते ही धृतराष्ट्र ने उन्हें आधा राज्य देकर इन्द्रप्रस्थ में अपने लिए नई राजधानी बनाने को कहा।

▭▭

जब कौरवों और पाण्डवों में युद्ध होना तय हुआ तो प्रश्न उठा कि सेना पति किसे बनाया जाए। पाण्डवों ने अपनी सेना को सात भागों में बांटा और

द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकि, चेकितान और भीमसेन जैसे महारथियों को नायक बनाया सेनापति का पद द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न को दिया गया।

उधर कौरवों ने पितामह भीष्म को अपना सेनापति नियुक्त किया।

कर्ण नहीं चाहता था कि बूढ़े भीष्म को सेनापति का कार्य सौंपा जाए। पर जब वे सेनापति बन ही गए तो कर्ण ने कहा कि जब तक भीष्म सेनापति होंगे, मैं युद्ध में भाग नहीं लूँगा।

जब भीष्म घायल होकर शर-शय्या पर जा पड़े तो द्रोणाचार्य को सेनापति का पद सौंपा गया। द्रोणाचार्य के सेनापति बन जाने पर कर्ण ने भी युद्ध में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया।

युद्ध के ग्यारहवें दिन द्रोणाचार्य ने सेनापति का पद संभाला था। उस दिन उन्होंने शकट-व्यूह की रचना की। उस दिन पहली बार कर्ण ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में भाग लिया।

आचार्य द्रोण बूढ़े हो चुके थे पर युद्ध में उनकी फुर्ती नवयुवकों से भी बढ़-चढ़कर थी। सेना-संचालन और युद्ध-कौशल में उनकी टक्कर का दूसरा कोई नहीं था।

आचार्य द्रोण सेना-संचालन और युद्ध दोनों कार्यों को करते थे। उनका रथ जिस ओर निकल जाता, शत्रु धरती पर लौटते दिखाई देते।

□□

द्रोणाचार्य के सेनापति बन जाने के बाद दुर्योधन, कर्ण और दुःशासन ने आपस में सलाह करके पाण्डवों को हराने की एक योजना बनाई। इस योजना के अनुसार दुर्योधन आचार्य द्रोण के पास जाकर बोला, "आचार्यवर! कोई ऐसा उपाय कीजिए कि युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर हमारे पास ले आइए। यदि इस काम को आप कर दें तो इससे अधिक हम आपसे कुछ नहीं चाहते।"

यह सुनकर द्रोणाचार्य प्रसन्न हो उठे। क्योंकि वे भी पाण्डवों को मारना नहीं चाहते थे। जब आचार्य ने यह स्वीकार कर लिया कि मैं युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर तुम्हें सौंप दूंगा" तब दुर्योधन ने उन्हें बताया कि युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर वह पाण्डवों से मनमानी शर्तें मनवाकर ही युधिष्ठिर को छोड़ेंगे।

दुर्योधन युधिष्ठिर को जीवित क्यों पकड़ना चाहता है, यह जानकर आचार्य द्रोण का मन ग्लानि से भर गया।

उधर पाण्डवों को गुप्तचरों से पता लग गया कि आचार्य द्रोण ने युधिष्ठिर को जीवित पकड़ लाने का वचन दुर्योधन को दे दिया है। इस सूचना से पाण्डवों में भय की लहर दौड़ गई। क्योंकि वे जानते थे कि आचार्य द्रोण अपने वचन की रक्षा करने में समर्थ हैं। उन्होंने युधिष्ठिर की सुरक्षा का पूरा-पूरा प्रबन्ध कर दिया।

अपने सेनापतित्व के पहले ही दिन द्रोणाचार्य ने पाण्डव सेना को भारी क्षति पहुँचाई। लेकिन गदा-युद्ध में जब भीम ने शल्य को बुरी तरह हरा दिया तो कौरव सेना के छक्के छूट गए। पाण्डवों ने दुगने उत्साह से हमला किया तो कौरव सेना में भगदड़ मचने लगी। जब द्रोण ने यह हालत देखी तो सारथी को आज्ञा दी कि रथ को उधर ले चलो, जिधर युधिष्ठिर युद्ध कर रहा हो।

द्रोण के विशाल सुनहरी रथ में सिन्धु देश के चार सुन्दर और फुर्तीले घोड़े जुते हुए थे। सारथी के जरा से संकेत से घोड़े हवा से बातें करने लगे और रथ युधिष्ठिर के सामने जा पहुँचा।

आचार्य के रथ को सामने देखकर युधिष्ठिर ने उन पर बाण वर्षा की पर आचार्य का बाल भी बाँका नहीं हुआ। बदले में आचार्य ने तीर मारकर युधिष्ठिर का धनुष काट डाला।

युधिष्ठिर अभी दूसरा धनुष भी नहीं ले पाये थे कि द्रोणाचार्य बिलकुल उनके पास जा पहुंचे। धृष्टद्युम्न ने आचार्य को रोकने का बहुत प्रयत्न किया पर सफलता नहीं मिली।

उधर कौरवों ने शोर मचा दिया कि युधिष्ठिर पकड़े गये। इतने में ही एकाएक अर्जुन वहाँ आ निकला। अर्जुन को देखते ही आचार्य को लगा कि बनता काम बिगड़ गया।

अर्जुन ने ऐसी तेज बाण-वर्षा की कि आकाश बाणों से भर गया और अन्धेरा छा गया।

अर्जुन के हमले के कारण आचार्य को पीछे हटना पड़ा। युधिष्ठिर को जीवित पकड़ने का उनका प्रयत्न व्यर्थ गया। शाम हो चली थी। युद्ध थम गया। सब सैनिक अपने-अपने शिविरों में चले गये।

□□

बारहवें दिन का युद्ध प्रारम्भ होने से पहले ही आचार्य द्रोण ने दुर्योधन को सफाई देते हुए कहा कि "अर्जुन के होते युधिष्ठिर को कैद कर लाना असम्भव है। फिर भी मैं अपनी ओर से पूरा प्रयत्न करूँगा। पर यदि तुम किसी तरह अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर युद्ध में उलझाए रख सको तो काम बन सकता है।"

द्रोण की यह बात त्रिगर्त देश के राजा सुशर्मा ने सुन ली। उसने योजना बनाई कि हम लोग अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारेंगे और लड़ते-भिड़ते मुख्य युद्ध-भूमि से दूर ले जाएँगे। बातयह थी कि ललकारने पर अर्जुन ललकारने वाले से अवश्य लड़ता है।

यही हुआ भी। त्रिगर्त देश के वीरों ने अर्जुन को युद्ध की चुनौती दी। अर्जुन अपने प्रण के अनुसार ललकारने वाले से युद्ध करने लगा। उसने युधिष्ठिर को बता दिया कि मेरा इन ललकारने वालों से युद्ध करना आवश्यक है।

युधिष्ठिर बोले, "अर्जुन ! तुम्हें आचार्य की प्रतिज्ञा मालूम है। अब तुम जैसा ठीक समझो, वैसा करो।"

अर्जुन ने कहा, "आज आपकी सुरक्षा का भार पांचाल राजपुत्र सत्यजित पर है। उनके जीते जी कोई आपका बाल भी बाँका नहीं कर सकेगा।"

यह कहकर अर्जुन तो भूखे बाघ की तरह त्रिगर्त वीरों पर टूट पड़ा। अर्जुन के प्राण लेवा बाणों से बिंधकर वे हाहाकार कर उठे। अपने वीर सैनिकों को युद्ध से विचलित देखकर सुशर्मा उन्हें उत्साहित करने लगा। हिम्मत मत हारो प्राण-पण से लड़ो और शत्रु को पीछे धकेल दो।"

रण-बाजे जोर-जोर से बजने लगे। घबराए हुए सैनिक फिर जोश से भर गये। वे रणचण्डी को प्राणों का रक्त पिलाकर चेताने लगे।

अर्जुन ने जब देखा कि ज्वाला पर मर मिटने वाले पतंगों की तरह ये वीर सैनिक आज पीछे नहीं हटेंगे तो श्री कृष्ण को रथ तेज हाँकने के लिए कहा।

आज श्री कृष्ण ने भी रथ हाँकने में अद्भुत कौशल दिखाया। अर्जुन ने भो अपनी बाण विद्या का ऐसा प्रदर्शन किया कि जिधर त्रिगर्त वीरों की दृष्टि जाती उन्हें बाण-वर्षा करता हुआ अर्जुन दिखाई देता। अर्जुन के बाणों से क्षत-विक्षत वीरों के शरीर लाल-लाल लहू के कारण ऐसे दिखाई देते जैसे पलाश के वृक्ष फूले हुए हों।

त्रिगर्त सेना ने बाण-वर्षा से अर्जुन के रथ को ढ़क दिया। पर अर्जुन तनिक भी विचलित नहीं हुआ और दूने उत्साह से शत्रुओं का संहार करने लगा।

द्रोणाचार्य को पता लग गया कि त्रिगर्त वीर अर्जुन को दूसरी ओर युद्ध में उलझाए हुए हैं। उन्होंने सेना को आज्ञा दी कि उस मोर्चे पर जाकर जोरदार हमला बोलें, जहाँ युधिष्ठिर हो।

युधिष्ठिर ने द्रोण के नेतृत्व में आक्रमण के लिये आती सेना क देखा तो धृष्टद्युम्न को सावधान करते हुए बोले, "वह देखो, आचार्य द्रोण दल-बल के साथ चले आ रहे हैं। अपने सैनिकों को सावधान करो। मोर्चेबन्दी को मजबूत करो।"

आचार्य द्रोण अभी पीछे ही थे कि पाण्डव सेनापति धृष्टद्युम्न ने कौरव सेनापति को आगे बढ़कर रोकने का निश्चय किया। धृष्टद्युम्न का जन्म ही द्रोणाचार्य का वध करने के लिये हुआ था। इस बात को आचार्य द्रोण भी जानते थे। अपने काल धृष्टद्युम्न को आते देखकर क्षण भर आचार्य द्रोण भयभीत से हुए। उन्होंने अपना रथ सामने न ले जाकर, दूसरी ओर जिधर राजा द्रुपद थे, ले गये।

द्रुपद की सेना का खूब संहार करने के बाद द्रोणाचार्य ने फिर युधिष्ठिर की ओर अपना रथ बढ़ाया। युधिष्ठिर पूरी सावधानी से आचार्य का सामना करने लगे और उनकी सुरक्षा के लिये नियुक्त सत्यजित भी उन पर टूट पड़े। घोर युद्ध छिड़ गया। आचार्य शत्रु पक्ष के वीरों के लिये साक्षात् काल सिद्ध हुए। पांचाल राजकुमार सत्यजित और वृक को उन्होंने यमलोक पहुंचा दिया।

अपनी सेना की क्षति होते देखकर विराटराज का पुत्र शतानीक द्रोण पर झपटा। पर आचार्य ने उसे भी मौत के घाट उतार दिया। जो भी द्रोण से टकराया, वही काल के गाल में चला गया। आचार्य द्रोण शत्रु सेना को चीरते हुए आगे बढ़ते गए। उनके प्रबल वेग को रोकने के लिये वीर वसुधान आगे बढ़ा और वह भी मारा गया।

उसके बाद आचार्य का रास्ता रोकने के लिये युधामन्यु, सात्यकि, शिखण्डी और उत्तमौजा आदि वीर आगे आए पर सबको मुँह की खानी पड़ी। अब तक आचार्य द्रोण युधिष्ठिर के बहुत पास जा पहुँचे थे।

आचार्य द्रोण ने युधिष्ठिर को जीवित पकड़ने का कई बार प्रयत्न किया पर सफलता नहीं मिली। यह देख दुर्योधन ने भीमसेन को कुचलने के लिये हाथियों की सेना उस पर छोड़ दी। भीमसेन ने इन लड़ाकू हाथियों की एक न चलने दी और उन्हें घायल कर दिया। दुर्योधन सामने आया तो उसके रथ की ध्वजा काटकर गिरा दी और उसका धनुष भी काट डाला। घायल हाथी जब चिंघाड़ते हुए दौड़ने लगे तो कौरव सेना के हजारों पैदल सैनिक उनके पैरों से कुचले गए और सेना में भगदड़ मच गई।

असम देश का राजा भगदत्त हाथी पर सवार होकर भीमसेन से युद्ध करने लगा। उसके हाथी ने भीमसेन के रथ और घोड़ों को तोड़-मरोड़ दिया। फिर भी भीमसेन घबराया नहीं। वह हाथी की टाँगों के बीच घुसकर उसे मारने लगा। एक बार तो हाथी ने भीमसेन को अपनी सूँड में लपेटकर धरती पर दे मारा और पैर से कुचलने लगा पर भीम पहले बच निकला। वह फिर हाथी की टाँगों के बीच घुसकर उसे घूसों से मारने लगा। इतने में कौरव सेना ने शोर मचा दिया कि भीमसेन मारा गया। जब यह शोर युधिष्ठिर ने सुना तो तुरन्त भगदत्त पर आक्रमण करने के लिये और सेना भेजी।

उधर भगदत्त के हाथी की चिंघाड़ सुनकर अर्जुन का माथा ठनका। उसने श्री कृष्ण से कहा कि रथ उधर ले चलिए जिधर यह शोर हो रहा है।

अर्जुन के पहुंचते ही पाण्डव सेना में पुनः उत्साह की लहर दौड़ गई। अर्जुन ने बूढ़े वीर भगदत्त को बाणों से बुरी तरह बींध डाला। भगदत्त के हाथी से नीचे गिरते ही कौरव-सेना में भगदड़ मच गई।

पाण्डव-सेना पूरे जोश के साथ कौरव-सेना पर टूट पड़ी। हजारों वीर मारे गये। हजारों घायल हुए। सूर्य अस्त होने पर आज का युद्ध भी बंद हो गया।

आज के युद्ध में पाण्डव-सेना का पलड़ा भारी रहा। पाण्डव-वीर अर्जुन की प्रशंसा करते नहीं थकते थे।

उधर आचार्य द्रोण युधिष्ठिर को जीवित न पकड़ पाने के कारण उदास थे।

□□

दूसरे दिन प्रातः दुर्योधन निराश और क्रोध से भरा हुआ आचार्य द्रोण के पास गया और प्रणाम करके वह बोला, "आचार्य ! युधिष्ठिर के समीप पहुँच कर भी आप उसे पकड़ नहीं सके। यही नहीं, हमारी सेना की भारी हानि भी हुई है। यदि आप पूरे मन और शक्ति से युधिष्ठिर को पकड़ने का प्रयत्न करते, तो आपको कौन रोक पाता।"

सबके सामने कहे गए इन तीखे शब्दों को सुनकर आचार्य द्रोण तिलमिला उठे। वे बोले, "मैंने तुम्हें पहले ही बता दिया था कि अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर रखे बिना युधिष्ठिर को पकड़ना कठिन है। फिर मैंने भरसक प्रयत्न किया है और आज भी करूँगा।"

युद्ध के तेरहवें दिन त्रिगर्त देश के सैनिकों ने फिर अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारा। अर्जुन उनकी चुनौती के उत्तर में लड़ते-लड़ते दक्षिण की ओर निकल गए।

जब अर्जुन दक्षिण की ओर निकल गया तो आचार्य द्रोण ने कौरव सेना की मोर्चेबन्दी चक्रव्यूह में की। इसके बाद उन्होंने युधिष्ठिर पर धावा बोल दिया। पाण्डवों की ओर से भीमसेन, सात्यकि, धृष्टद्युम्न आदि वीरों ने आचार्य के आक्रमण को रोकने का असफल प्रयत्न किया।

सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु यद्यपि अभी किशोर ही था पर युद्ध में अपने पिता अर्जुन की बराबरी करता था। पाण्डव सेना में अर्जुन के अतिरिक्त एक मात्र अभिमन्यु ही था जो चक्रव्यूह को तोड़ना जानता था। द्रोण के घातक वारों से तंग आकर युधिष्ठिर ने अभिमन्यु से कहा कि अर्जुन संसप्तकों से लड़ता हुआ दक्षिण की ओर दूर निकल गया है और अब तुम्हीं हो जो आचार्य के बनाये चक्रव्यूह को तोड़ सकते हो।

अभिमन्यु ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "महाराज! मुझे चक्रव्यूह में प्रवेश करना तो आता है, किन्तु निकलना नहीं आता।"

युधिष्ठिर बोले, "बेटा! व्यूह को तोड़कर जब तुम अन्दर घुस जाओगे तो हम भी तुम्हारे पीछे-पीछे चले जाएँगे। फिर बाहर निकलने में कोई कठिनाई नहीं होगी।"

भीमसेन ने भी युधिष्ठिर का समर्थन किया। वह बोला, "मैं गदा लिये तुम्हारे साथ रहूँगा और रास्ता बनाता चलूँगा। धृष्टद्युम्न, सात्यकि आदि की सेनाएँ भी तुम्हारे पीछे चलेंगी। बस, तुम एक बार चक्रव्यूह को तोड़ दो। फिर हम कौरव सेना को धूल चटाकर छोड़ेंगे।"

अभिमन्यु चक्रव्यूह को तोड़ने के लिये तैयार हो गया। युधिष्ठिर ने उसे यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया।

अभिमन्यु ने द्रोणाचार्य के रथ की ऊँची ध्वजा को देखकर अपने सारथी को उसी ओर तेजी से रथ ले जाने को कहा।

यद्यपि रथ तेजी से दौड़ रहा था पर उत्साह में भरे अभिमन्यु को सन्तोष कहाँ? वह बार-बार कहने लगा, "तेज चलाओ, और तेज...।"

श्री कृष्ण का भानजा और अर्जुन का बेटा अभिमन्यु यद्यपि अवस्था में छोटा था पर वीरता में किसी से कम नहीं था। द्रोणाचार्य जैसे युद्ध-विद्या के महान् आचार्य का सामना करने में भी उसे तनिक संकोच नहीं था।

अभिमन्यु को आते देखकर कौरव-सेना में हलचल मच गई। शत्रु भी उसकी वीरता के प्रशंसक थे।

अभिमन्यु का रथ धड़धड़ाता हुआ आ पहुँचा। जैसे सिंह हाथियों के झुण्ड में निर्भय घुस जाता है, वैसे ही शत्रु सेना को चीरता हुआ अभिमन्यु व्यूह में घुसने लगा। दो नदियों के प्रवाह जहाँ आपस में टकराते हैं वहाँ घोर कोलाहल मचता है और टकराहट से पानी ऊपर को उछल जाता है, वैसे ही दोनों सेनाओं की टक्कर से भी हुआ। आचार्य द्रोण के देखते-देखते अभिमन्यु ने चक्रव्यूह को तोड़ डाला और अन्दर घुस गया। कौरव वीर हक्के-बक्के से देखते ही रह गये। आचार्य द्रोण ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि उनका बनाया चक्रव्यूह यों क्षण भर में एक किशोर वीर के द्वारा तोड़ दिया जाएगा।

कौरव वीर अभिमन्यु का रास्ता रोकने के लिये आगे बढ़ते गए और मरते गए। युद्ध क्षेत्र लाशों से भर गया। बड़े-बड़े महारथियों के सामने अभिमन्यु कौरव को तहस-नहस करता रहा था। दुर्योधन अपनी सेना को पिटते देखकर क्रोध से उबलने लगा। वह अभिमन्यु से युद्ध करने लगा। सेनापति द्रोणाचार्य ने दुर्योधन की सहायता के लिए वीर सैनिकों का एक दल भेज दिया। दुर्योधन अभिमन्यु के हाथों मरते-मरते बचा।

अभिमन्यु द्वारा कौरव सेना का विनाश होते देखकर कौरव खिसिया गए और नीचता पर उतर आए। बहुत से वीर एक साथ उस अकेले बालक पर टूट पड़े। पर जैसे चट्टान से टकराकर समुद्र की लहरें बिखर जाती हैं, वैसे ही कौरव वीर भी अभिमन्यु से टकराकर छितर गए।

महारथी कर्ण, मद्रराज शिल्प और वीर अश्मक भी अभिमन्यु के सामने टिक न सके। स्वयं आचार्य द्रोण इस बालक की वीरता पर मुग्ध हो गए। वे अभिमन्यु की प्रशंसा करने लगे। दुर्योधन को यह प्रसन्नता बहुत बुरी लगी। उसने आरोप लगाया कि आचार्य द्रोण जान-बूझकर अभिमन्यु को रोक नहीं रहे हैं।

पूर्व निश्चय के अनुसार ज्यों ही पाण्डव सेना अभिमन्यु के पीछे-पीछे चक्रव्यूह में प्रवेश करने लगी त्यों ही सिन्धुराज जयद्रथ ने पाण्डव सेना का रास्ता रोक दिया। चक्रव्यूह में अभिमन्यु ने जो दरार डाल दी थी, कौरव वीरों ने उसे भर दिया। वे बड़ी संख्या में वहाँ इकट्ठे होकर पाण्डव सेना का मार्ग रोकने में सफल हो गए। अभिमन्यु चक्रव्यूह के भीतर अकेला पड़ गया।

दुर्योधन का पुत्र लक्ष्मण भी अभिमन्यु से जा टकराया और मारा गया। पुत्र की मृत्यु से दुर्योधन का कलेजा फटने लगा। उसने अपने सहयोगियों को अभिमन्यु को मौत के घाट उतार देने के लिये ललकारा। द्रोण, अश्वत्थामा, बृहदबल, कृतवर्मा आदि छः महारथियों ने अभिमन्यु को चारों ओर से घेर लिया।

इन छः महारथियों को लगा कि यदि हम नियमों के अनुसार युद्ध करेंगे तो इस बालक से जीतना असम्भव है। अतः उन्होंने अधर्म युद्ध का सहारा लिया। कर्ण ने पीछे की ओर से बाण चलाकर अभिमन्यु का धनुष काट डाला। सारथी और घोड़े भी मारे गये। तब अभिमन्यु ढाल-तलवार लेकर लड़ने लगा। फिर भी उसने सभी वीरों के दाँत खट्टे कर दिए।

तब आचार्य द्रोण आगे बढ़े और उसकी तलवार काट डाली। उधर कर्ण ने अपने बाणों से उसकी ढ़ाल के टुकड़े-टुकड़े कर दिए।

अभिमन्यु टूटे रथ का पहिया लेकर उसे चक्र की तरह घुमाने लगा।

अब तो सारे कौरव वीर एक साथ उस पर टूट पड़े। उसके हाथ का पहिया भी चूर-चूर हो गया। इसी समय दुःशासन का पुत्र गदा लेकर उस पर झपटा। अभिमन्यु भी उसके साथ गदा-युद्ध करने लगा। लड़ते-लड़ते दोनों राजकुमार गिर पड़े। दोनों ही हड़बड़ाकर उठने लगे तो दुःशासन का पुत्र क्षण भर पहले उठ खड़ा हुआ और उसने अभिमन्यु के सिर पर गदा मारकर उसे सदा के लिए युद्ध भूमि में सुला दिया।

अभिमन्यु के मारे जाने से कौरव सेना में प्रसन्नता छा गई।

संध्या को जब कृष्ण और अर्जुन संशप्तकों से युद्ध करके लौटें तो अभिमन्यु के चक्रव्यूह में मारे जाने का दुःखद समाचार सुनकर अर्जुन शोक से व्याकुल हो गया ।

जब अर्जुन को पता चला कि अभिमन्यु की मृत्यु का प्रमुख कारण जयद्रथ है, तो उसने दूसरे दिन सूर्यास्त से पूर्व जयद्रथ को मार डालने की प्रतिज्ञा कर डाली और प्रतिज्ञा पूरी न होने पर स्वयं चिता में प्रवेश का प्रण किया ।

गुप्तचरों द्वारा कौरवों को सूचना मिल गई कि अर्जुन ने जयद्रथ को कल मारने की प्रतिज्ञा की है । जयद्रथ इस समाचार को सुनकर भयभीत हो उठा । वह दुर्योधन के पास जाकर बोला कि मैं तो अपने देश लौट जाता हूँ ।

दुर्योधन ने उसे धीरज बंधाया और समझाया कि हम सब आपकी सुरक्षा करेंगे । आप यहीं पर रहिए । वह रुक गया ।

दुर्योधन से आश्वासन पाकर जयद्रथ आचार्य द्रोण के पास गया । आचार्य द्रोण ने जयद्रथ को भी युद्ध-विद्या सिखाई थी । वे उसे धीरज बंधाते हुए बोले कि मैं कल ऐसे व्यूह की रचना करूँगा कि उसे अर्जुन भी नहीं तोड़ पाएगा । उसके सबसे पिछले मोर्चे पर तुम्हें सुरक्षित रखा जाएगा ।

□□

आज आचार्य ने कई व्यूह रचे । सबसे आगे शकट-व्यूह, इसके पीछे पद्म-व्यूह और अन्त में सूचीमुख-व्यूह । जयद्रथ सूचीमुख-व्यूह के अन्त में था । और सभी महारथी उसकी सुरक्षा में लगा गये दिए ।

शकट-व्यूह के हरावल मोर्चे पर स्वयं आचार्य द्रोण थे । युद्ध प्रारम्भ हुआ । दुर्मर्षण और दुःशासन को रौंदता हुआ अर्जुन आचार्य द्रोण के सामने जा पहुँचा । गुरु-शिष्य भिड़ने लगे । श्री कृष्ण ने अर्जुन को आचार्य से लड़ना छोड़ कर आगे बढ़ने की सलाह दो । श्री कृष्ण ने रथ को तेजी से आगे बढ़ाया ।

अर्जुन को जयद्रथ की ओर बढ़ते देख दुर्योधन को चिन्ता हुई। वह अर्जुन को रोकने के लिए आगे बढ़ा। उसने आचार्य द्रोण के दिए हुए अभेद्य वस्त्र पहन रखे थे, जिनके कारण अर्जुन के बाण व्यर्थ जा रहे थे। पर फिर भी दुर्योधन पीठ दिखाकर भाग खड़ा हुआ।

आज आचार्य का सामना धृष्टद्युम्न से हो गया। यदि सात्यकि धृष्टद्युम्न की सहायता को न आते तो धृष्टद्युम्न के प्राण संकट में पड़ जाते।

सात्यकि ने अपने सारथी से कहा, "आचार्य द्रोण अपने ब्राह्मण धर्म को छोड़कर, पाण्डवों के विरुद्ध शस्त्र उठाने पर उतारू हो गए हैं। इन्हीं के कारण दुर्योधन अकड़ता है। आज मैं इन्हीं से दो-दो हाथ करूँगा।"

सारथी रथ को द्रोण के सामने ले गया। दोनों में जो भयंकर युद्ध हुआ उसे देखने के लिए सब सैनिक लड़ाई छोड़कर खड़े हो गए। सात्यकि ने सौ बार द्रोण के धनुष को काटा। आचार्य द्रोण भी सात्यकि के युद्ध-कौशल से प्रभावित हुए। जो अस्त्र आचार्य चलाते, वही अस्त्र सात्यकि चला देता। जब आचार्य ने आग्नेय अस्त्र चलाया तो सात्यकि ने वरुण अस्त्र चलाकर उसे शान्त कर दिया। जब सात्यकि थक चला तो युधिष्ठिर ने उसकी सहायता के लिए धृष्टद्युम्न को भेजा।

कुछ देर बाद युधिष्ठिर ने भीमसेन को अर्जुन की सहायता के लिए भेजा। उसे आगे आचार्य मिले। वे बोले, "भीमसेन! तुम मुझसे लड़कर ही आगे जा सकते हो। अर्जुन तो मेरी अनुमति से आगे गया है, पर मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा।"

भीमसेन ने कड़ककर उत्तर दिया, "अर्जुन आपके व्यूह को अपने पराक्रम से तोड़कर भीतर घुसा है। आपकी अनुमति से नहीं। पर मुझसे ऐसी आशा न करें। इस समय आप मेरे गुरू नहीं शत्रु हैं।" यह कहते-कहते भीम

गदा घुमाता हुआ द्रोण पर टूट पड़ा। उसने गदा से द्रोण के रथ को तोड़ दिया। उन्होंने दूसरा रथ लिया तो उसे भी तोड़ दिया। इस तरह भीमसेन आगे बढ़

गया। रास्ते में जो भी सामने आया उसी पर गदा चला दी। अर्जुन के पास पहुंच कर भीम ने सिंह नाद किया जिसे सुनकर युधिष्ठिर समझ गए कि अर्जुन सकुशल है।

इस समय रणभूमि में सात्यकि, भीमसेन और अर्जुन, कौरव पक्ष के

भूरिश्रवा, कर्ण और जयद्रथ से लोहा ले रहे थे। आचार्य द्रोण व्यूह के द्वार पर ही थे।

संध्या का अंधेरा छाने लगा। सूर्यास्त होता दिखा। पाण्डव सेना में उदासी और कौरव सेना में प्रसन्नता छा गई। जयद्रथ ने सोचा कि आज तो प्राण बचे। अब अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार जल मरेगा। इससे कौरव और भी प्रसन्न हुए। अपनी प्रतिज्ञानुसार अर्जुन चिता में प्रवेश की तैयारी करने लगे। श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि कुछ समय के लिए यह अंधकार मैंने अपनी योगमाया से फैलाया है। तुम तुरन्त जयद्रथ का सिर धड़ से उड़ा दो। पर ध्यान रहे कि सिर धरती पर न गिरे।

अर्जुन ने वैसा ही किया जयद्रथ का तीरों से बिंधा सिर उसके पिता वद्धक्षत्र की गोद में जाकर गिरा। पाण्डव-सेना के वीरों ने प्रसन्नता में भरकर विजय शंख बजाए। आज भी पाण्डवों का पलड़ा भारी रहा।

□□

चौदहवें दिन का युद्ध बड़ा भयंकर था। कर्ण की शक्ति से भीम पुत्र घटोत्कच मारा गया था। आचार्य द्रोण ने अपने बाणों से पाण्डव-सेना में तबाही मचा दी।

यह देख श्री कृष्ण अर्जुन से बोले, "आचार्य द्रोण को हराना कठिन है। जब तक इनके हाथ में शस्त्र रहेगा, यह हमें जीतने नहीं देंगे। इसलिए कोई चाल चलनी चाहिए।"

श्री कृष्ण की सलाह से यह तय हुआ कि धर्मराज युधिष्ठिर आचार्य द्रोण से कहेंगे कि अश्वत्थामा मारा गया। पुत्र शोक में आचार्य द्रोण शस्त्र

छोड़ देंगे। ठीक उसी समय उन पर घातक प्रहार करके उनका वध कर दिया जाएगा।

इस योजना के अनुसार भीमसेन ने गदा का प्रहार करके अश्वत्थामा नाम के एक लड़ाकू हाथी को मार डाला। फिर भीमसेन द्रोण के पास जाकर जोर-जोर से चिल्लाने लगा कि मैंने अश्वत्थामा को मार डाला।

भीमसेन की आवाज जब द्रोणाचार्य के कानों में पड़ी तो वे विचलित हो गए। पर उन्हें यह बात सच नहीं लगी। उन्होंने युधिष्ठिर से पूछा। वे मानते थे कि युधिष्ठर कभी झूठ नहीं बोलेगा। युधिष्ठिर योजना के अनुसार झूठ बोलते हुए झिझके पर किसी तरह जी कड़ा करके बोले, "हाँ, अश्वत्थामा मारा गया। आगे वे ज्यों ही यह कहने लगे कि 'मनुष्य नहीं हाथी' तो पाण्डव-वीरों ने जोर की शंख ध्वनि कर दी जिसके कारण युधिष्ठिर के ये शब्द 'मनुष्य नहीं हाथी' द्रोणाचार्य को सुनाई नहीं दिए।

युधिष्ठिर के मुँह से यह सुनते ही कि अश्वत्थामा मारा गया, द्रोण के मन में संसार से विरक्ति पैदा हो गई। उन्हें लगा कि अब जीना बेकार है। उन्होंने तुरन्त अपने शस्त्र-अस्त्र फेंक दिए और रथ पर ही आसन लगाकर ध्यान मग्न हो गए।

इतनें में पाण्डव सेनापति धृष्टद्युम्न हाथ में तलवार लिए द्रोण पर झपटा। यह अधर्म कार्य देखकर चारों ओर हाहाकार मच गया। धृष्टद्युम्न ने जरा भी देर किए बिना ध्यान लगाकर बैठे आचार्य द्रोण का सिर धड़ से अलग कर दिया। ध्यान मग्न आचार्य द्रोण की आत्मा परमात्मा के साथ एकाकार हो गई।